अन्तरा-शब्दशक्ति

मैं अलंकृता

काव्य संग्रह

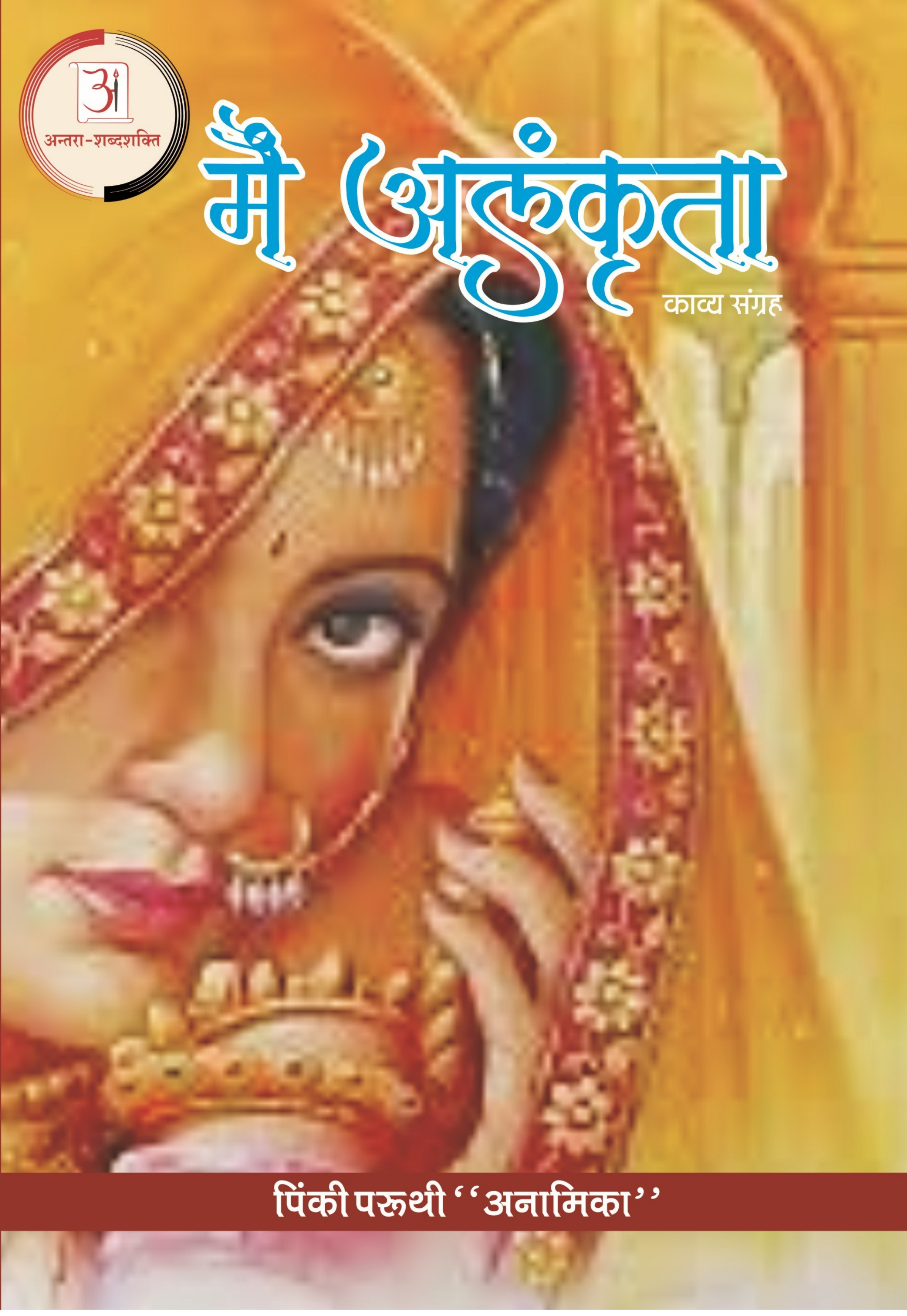

पिंकी परूथी ''अनामिका''

मैं अलंकृता,..!

(काव्य संग्रह)

पिंकी परुथी "अनामिका"

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- "978-93-86666-78-9"

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन
मुख्य कार्यालय - १५ नेहरु चौक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१
दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९
अणुडाक- antrashabdshakti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com
प्रथम संस्करण २०१९- पिंकी परुथी "अनामिका"

मूल्य - ६०.०० रुपये
आवरण चित्र- संदीप सोनी,वारासिवनी
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी
MAIN ALANKRITA BY PINKY PARUTHI ANAMIKA
वैधानिक चेतावनी - इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

अनुक्रमणिका

मैं अलंकृता,.. 5

1. मैं अलंकृता 7
2. माँ क्यूँ तूने... 8
3. फिर ना कहना हमने पहले नहीं कहा 9
4. बारिश के मौसम में.. 10
5. ख़ामोश है.. 11
6. मेरा मन ही मेरा दोस्त है... 12
7. शब्द भी तुम हो, अर्थ भी तुम हो... 13
8. जिन्दगी 14
9. ताना-बाना 15
10. हवा के झोंके से.. 16
11. चुपचाप हूँ इस कदर मैं... 17
12. ढल रही हूँ मैं... 18
13. स्वाभिमान 19
14. जरूरी 20
15. माँ 21
16. विवेक 22
17. परिमंडल 23
18. विजयादशमी 24

19. मैं स्वप्न रंजिता 25

20. बरगद का वह पेड़ 26

21. आशाओं के दीप 27

22. लोहड़ी 28

23. तुम आओ तो 29

24. सीमा रेखाएँ 30

25. हमारा चयन 31

26. होली इस बार 32

मैं अलंकृता,..

कहते हैं, यह संसार भावों से ही बना है। भावनाओं का परिणाम इतना तीव्र होता है, कि जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है। वो भावनाएँ ही होती हैं, जो हमें लक्ष्य की ओर अग्रसर करती हैं, हमें अपने जीवन साथी से मिलवाती हैं, सही निर्णय लेने में सहायता करती हैं, ईश्वर के समीप ले जाती हैं, भावनाओं से जुड़ा हुआ हर व्यक्ति कुछ न कुछ अभिव्यक्ति भी करता है, बोलकर, लिखकर या अपने कार्य को करते हुए।

रचनाकार यह अभिव्यक्ति शब्दों के माध्यम से करता है। यदि भावनाएँ स्वच्छ, निर्मल, पारदर्शी हों तो पाठक भी बिना अभिभूत हुए नहीं रह सकता है। अन्तर्मन में संवेदनाओं का उमड़ना - घुमड़ना कई बार बहुत ही सकारात्मक परिवर्तन ला सकता है। यदि प्रेम, दया, करुणा, आत्मविश्वास, साहस, आध्यात्म, रचनाओं के माध्यम से परोसा जाए तो वह भी समाज में नैतिकता स्थापित करने में सक्षम है।

संस्कार और संस्कृति की रक्षा लेखन के माध्यम से की जा सकती है। बस, इन्हीं कारणों से सदा ही हृदय में आए भावों को छंदमुक्त रचनाओं के माध्यम से आमजन तक पहुँचाने का प्रयास करती हूँ। सरल और सहज भाषा के प्रयोग को प्राथमिकता देते हुए एक और नवीन प्रयास किया गया है। मैं अपनी इस पुस्तक को भी

सदा की भाँति अपने पति, बच्चों, माता-पिता, मित्रों और सहयोगियों को समर्पित करती हूँ। डॉ. प्रीति सुराना जी का विशेष आभार, जिन्होंने सदा ही उत्साहित किया और मुझ पर विश्वास किया। आप सभी के समीक्षार्थ प्रस्तुत है, यह काव्य संग्रह, मैं अलंकृता।

पिंकी परुथी "अनामिका"

मैं अलंकृता

नाम, काम, प्रसिद्धि, वैभव, सम्पन्नता,
शिक्षा, योग्यता, माना कि, आवश्यक होंगे,
अस्तित्व के परिचय के लिए।

किन्तु,
मेरा परिचय, वो तो याद ही नहीं रहा, पता नहीं।
कब, कहाँ, कैसे, क्यों? हाँ इतना तो याद है,
अपने-अपने नाम से, अपनी-अपनी
आवश्यकताओं के लिए, पुकारा गया।

अपने-अपने काम से, पूर्ति हो जाने के बाद,
विस्मृत कर दिया गया।

समय कहाँ था, यह सोचने का कि,
उपयोग हो रहा है।

धर्म, कर्त्तव्य, परम्परा, परीक्षा, परिणाम
आदि के लिए, उपभोग हो रहा है स्वयं का,
सजग, सचेत किया गया।

गृहलक्ष्मी, बुद्धिमान, अन्नपूर्णा, सर्व गुण संपन्न,
नामों से, अलंकृत किया गया, कभी मित्रता,
कभी संबंधों को, आधार बनाकर, संकल्पों को
पूरा किया गया।

हाँ मैं हूँ विशेष, भिन्न-भिन्न,
नामों से पुकारे जाने वाली नारी,मैं अलंकृता,..।

माँ क्यूँ तूने

माँ क्यूँ तूने मुझे उड़ना सिखाया,
मस्ती में, नटखटपन में क्यूँ तूने रहना सिखाया।

बिजली जैसी चंचल, आँधी की सी हलचल,
अपने ही मतवालेपन में, क्यूँ तूने जीना सिखलाया।

क्यूँ तू खुश होती थी, मेरे अल्हड़पन से,
क्यूँ उड़ने दिया तूने, मुझको अपने मन से।

जब पंख कटे तेरी बिटिया के, फिर भी तू खामोश रही,
क्यूँ नहीं रोका, तूने उनको बस दूर से ही देखती रही।

खामोश है आज वो, सिसकियों के साथ है वो,
लाज, शरम , इज्जत की खातिर आज भी उदास है वो।

माँ, क्या मिला तुझे ये सब देखकर,
अपने ही हाथों उसके सपने बेचकर।

खुश है, पर खामोश है वो, अपने चिड़ा-चिड़ी को देखकर
वो न कर पाएगी वो ही सब, जो हुआ उसके साथ है।
माँ क्यूँ तूने मुझे उड़ना सिखाया?

फिर ना कहना हमने पहले नहीं कहा

फिर न कहना हमने पहले नहीं कहा,
न आते हो, न रुकते हो,
दो घड़ी भी न ठहरते हो,
दिल में ही कहानी बुनते हो,
परेशां हमें भी करते हो।

खो न जाएँ हम कहीं, ज़िन्दगी के सफर में कभी,
फिर न कहना हमने पहले नहीं कहा।
वादा करके झुठलाते हो, कसमों को तोड़ा करते हो,
न सुनते हो, न बतलाते हो, दूरियाँ और बढ़ाते हो।

मजबूर होकर हम कहीं, भटक न जाएँ कभी,
फिर न कहना हमने पहले नहीं कहा।
दिन को न सो पाते हैं, रातों को भी जगाते हो,
खयालों में रहकर हमें, क्यों इतना तड़पाते हो।

बावरे होकर हम, बेखबर न हो जाएँ कभी,
फिर न कहना हमने पहले नहीं कहा।
गहराई में उतरो तुम, बेफिक्र इतने न हो जाओ तुम,
सँभलो और सँभालो तुम, बेरुखी के समुन्दर में डूब
न जाएँ हम कभी, फिर ना कहना हमने पहले नहीं कहा।

सूनी महफिल, सूने मंजर खामोशी ही खामोशी है,
अब कहाँ वो याराने हैं, अब कहाँ वो मदहोशी है,
खुद से ही खफा होकर, टूट न जाएँ हम कभी,
फिर न कहना हमने पहले नहीं कहा ।

बारिश के मौसम में

बारिश के मौसम में,
दिल की हर धड़कन में,
खामोशी के आँगन में,
हो यदि प्यार की बरसात।
भीगे इस तन मन में,
गुनगुनाते हर गीतों में,
यादों में, सपनों में,
खोए रहें दिन रात।

हरे भरे उन रास्तों में,
चुपके से तन्हाई में,
गुल में, गुलिस्तां में,
हो यदि तुम्हारा साथ।
पल पल में, हर पल में,
सूनी उन गलियों में,
गीतों को, सपनों को,
दोहराएँ हम एक साथ।

दिन में, और रातों में, रिमझिम इन बूँदों में,
हाथ तेरा मेरे हाथों में, आओ निकलें फिर एक बार।

अपनी धुन में और मस्ती में, हर गली और हर बस्ती में,
भूले हुए उन रास्तों में, आओ घूमें फिर एक बार।

आओ जी लें हम फिर एक बार, आओ खो जाएँ हम फिर एक बार।
आओ डूब जाएँ हम फिर एक बार, आओ घूमें हम फिर एक बार।

खामोश है

खामोश हैं निगाहें ,नजारे भी खामोश हैं।
खामोश हैं लब भी, बातें भी खामोश हैं।

पलकें हैं झुकी हुई, आँखें भी खामोश हैं।
खामोश है मुस्कुराहट, हँसी भी खामोश है।

कदम हैं रुके हुए, रास्ते भी खामोश हैं।
बाहें हैं सिमटी हुई, कन्धे भी खामोश हैं।

ज़िन्दगी है रुकी हुई, फैसले भी खामोश हैं।
खामोश हैं बादल और आसमां भी खामोश है।

खामोशी इस कदर है, कि आवाज बस इक आती है,
धड़कन है वो मेरी जो कहती है तू अभी "_बाकी_ "है।

खामोशी में ही खामोश रहकर, कर ले हसरतें पूरी,
खामोश होने से पहले, वो रह न जाएँ अधूरी।

मेरा मन ही मेरा दोस्त है

मेरा मन ही मेरा दोस्त है,
हाँ, मेरा मन ही मेरा दोस्त है।
ज़िन्दगी के हर दौर में, आए कई और गए भी,
आए, रुके, ठहरे और चले गए सभी।

कुछ करीब हुए, कुछ अज़ीज़ हुए,
कुछ साथ चले, फिर दूर हुए।
कुछ वादा करके मुकर गए,
कुछ दावा करके बदल गए।

मौसम के जैसे बदलते गए,
हम लेकिन रुके वहीं, ठहर गए।
फिर मन मेरा, मेरा दोस्त बना,
हमसाया और हमसफ़र बना।

सब ख़ामोश हुए, वो कहता रहा,
नई राह दिखाकर चलाता रहा।
बैचेनी, उदासी, तकलीफ़ सारी,
मेरे मन ने मेरी पूरी उतारी।

उसने ही रिश्ता निभाया मेरी तन्हाई में,
सँभाला, सहेजा, लिया अपनी गहराई में।
न कोई गिला, न शिकवा है, अपने परायों से,
मेरे मन ने ही मिलाया मुझे, अपने खयालों से।
मेरा मन ही मेरा दोस्त है, हाँ मेरा मन ही मेरा दोस्त है।

शब्द भी तुम हो, अर्थ भी तुम हो

शब्द भी तुम हो, अर्थ भी तुम हो,
उनसे बनी रचना भी तुम हो।

आँखें भी तुम हो, आँसू भी तुम हो,
उन आँखों का नजारा भी तुम हो।

हवा भी तुम हो,साँस भी तुम हो,
उन साँसों की धड़कन भी तुम हो।

गीत भी तुम हो, संगीत भी तुम हो,
उन गीतों का फनकार भी तुम हो।

कर्ता भी तुम हो, कर्म भी तुम हो,
उन कर्मों का भाव भी तुम हो।

धूप भी तुम हो, छाँव भी तुम हो,
हर मौसम का अहसास भी तुम हो।

मैं भी तुम हो, तुम भी तुम हो,
मेरी इक पहचान भी तुम हो।

मोह भी तुम हो, माया भी तुम हो,
उस बन्धन से छूटा, वैराग्य भी तुम हो।

ज़िन्दगी

कुछ के लिये ऐशो आराम है ज़िन्दगी,
कुछ के लिये बेनाम, बेकार है ज़िन्दगी।
देखा जाय तो एक समय ही है ज़िन्दगी,
कहीं ठहरी हुई तो कहीं चाल है ज़िन्दगी।

कभी धूप तो कभी छाँव है ज़िन्दगी,
कभी सच तो कभी ख्वाब है ज़िन्दगी।
कहीं जानी हुई सी तो कहीं अनजान है ज़िन्दगी,
कहीं खिली खिली तो कहीं परेशां है ज़िन्दगी।

कहीं भरपेट तो कहीं, पेट की आग है ज़िन्दगी,
कहीं खुशनसीब तो कहीं लाचार है ज़िन्दगी।
किसी की मुस्कुराहट तो किसी की आँसू है ज़िन्दगी,
किसी की खुशनुमा तो किसी की बदहवास सी है ज़िन्दगी।

कहीं बेखौफ तो कहीं डरावनी है ज़िन्दगी,
कहीं बहार तो कहीं उजड़ी हुई है ज़िन्दगी।
कहीं रौशन तो कहीं बुझता चिराग ज़िन्दगी,
कहीं बँधी हुई तो कहीं आजाद है ज़िन्दगी।

कहीं मोहब्बत का पैगाम तो कहीं बदहाल है ज़िन्दगी,
किसी किसी के लिये बस इन्तजार है ज़िन्दगी।
किसी की भरपूर तो किसी की आधी अधूरी है ज़िन्दगी,
हर एक की अपनी कहानी है ज़िन्दगी।.

ताना-बाना

कुछ अबूझी, अनसुलझी, पहेलियाँ।
जीवन की संध्या तक, विचरती हैं, अंतर्मन में।

ताना - बाना जीवन पर्यंत, समय ही नहीं देता,
अल्पावधि सदैव, रहती है विद्यमान।

प्रयास तनिक भी, व्यर्थ न होगा,
निश्चित है, किन्तु उत्साह भी, आवश्यक है।

हर अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तर, मिलेगा भीतर ही,
वार्ता स्वयं की स्वयं से, दैनिक प्रतिबद्धता से,
आनन्दमयी क्षणों का, आस्वादन निरन्तर,
लालायित कर देगा, रसानुभूति होने पर,
विस्तृत अवधि तक, विस्मृत कर देगा,
जीवन के सारे, व्यर्थ के ताने-बाने।

एकाकीपन बन जाए मधुबन,
खोजने लगे जब एकान्त, यह मन,
जीवन की संध्या तक नहीं बचेंगे, वो प्रश्न?

अनावश्यक ही चल रहे थे संग में,
पतँग की लम्बी पूँछ के समान,
पूँछ न रहेगी, तब भी उड़ेगी, निश्चल मन की पतँग।

हवा के झोंके से

हवा के झोंके से कुछ पन्ने आज जमीं पर गिरे,
बहुत पुराने, कुछ खाली, कुछ आधे लिखे हुए।

कुछ मुड़े हुए, कुछ जुड़े हुए, कुछ फटे हुए भी मिले,
एक-एक को बटोरा, कुछ को जोड़ा, कुछ को फाड़ा
कुछ बिखर गए, फिर भागी, फिर इकट्ठा किया,
कुछ ढूँढ़ा, कुछ पाया।

सब में वो ही, हाँ वो ही, लम्बी साँसें, तेज़ धड़कन,
ये क्या हुआ? सबको आज फिर खुद ही उड़ा दिया,
क्यूँ पता नहीं? इल्ज़ाम हवा को भी न दिया।

खुद पे ही लिया, कुछ पन्ने जो आज ज़मीं पर गिरे,
वो छूट गए, वो उड़ गए, वो जाने कहाँ अब पहुँच गए।

कुछ पन्ने जो आज ज़मीं पर गिरे,
कुछ पन्ने जो आज ज़मीं पर गिरे।।

चुपचाप हूँ इस कदर मैं

चुपचाप हूँ इस कदर मैं कि लफ्ज़ खो से गए हैं,
खामोशियों से कहना, लेकिन गूँगी नहीं हूँ मैं।

प्रतिरोध नहीं करती, प्रतिकार भी नहीं मैं,
हौंसलों से कहना, लेकिन हारी नहीं हूँ मैं।

समझौता मैं करती रही हूँ, आगे भी करती रहूँगी,
वादों से कहना, लेकिन कसमें भूली नहीं हूँ मैं।

टिक पाओगे न तुम, राज़े दिल को जानकर,
रस्मों रिवाजों से कहना, लेकिन टूटी नहीं हूँ मैं।

किनारे पे बैठी हूँ, किसी इन्तजार में मैं,
लहरों से कहना, लेकिन डरी नहीं हूँ मैं।

आसमाँ में परिंदों को देखकर, जमीं से निहारती हूँ मैं,
पंखों से कहना, लेकिन उड़ना भूली नहीं हूँ मैं।

न होना तुम परेशाँ कभी, मेरी सूरत को देखकर,
ये मुरझाई सी तो है, लेकिन खुश रहना अभी भी भूली नहीं हूँ मैं।

स्वाभिमान

माँ, मैं कुछ कह रही हूँ, क्या, तुम सुन रही हो?
तुम चाहती हो मैं, पढ़ूँ लिखूँ, आगे बढ़ूँ,
नौकरी करूँ, पैसा कमाऊँ, नाम भी कमाऊँ।

ताकि, तुम शान से कह सको, कि यह "मेरी बेटी है",
सुनो माँ, तुम घर में रहती हो, क्या कभी यह सोचती हो,
बाहर घर के निकलती हैं, जब तुम्हारी बेटियाँ।

नज़रें गढ़ी होती हैं, हैवानों की, भेड़ियों की,
राक्षसों की, जिस्म पर, इज्जत पर, अस्मत पर,
बदन पर, सच पूछो तो, एक-एक अंग पर।

नोच डालते हैं, कुरेद डालते हैं, जला डालते हैं,
बेच डालते हैं, तुम्हारी आन बान और शान को।

माँ, वो भेड़िए, माँ यह सब रोज होता है, हर पल होता है,
क्यों नहीं सिखाती, तुम मुझे, ताकतवर बनो! जवाब दो!
लड़ो! कुचल डालो! बदल डालो! नोच डालो! खत्म कर दो।

हाँ माँ, मैं पल-पल, आबरु के साथ, कैसे खेलने दूँ?
कैसे सहन करूँ? घिनौनी निगाहों को, दरिंदगी को, वहशीपन को।

माँ,
मैं चाहती हूँ, लड़ना, बदलना, जीतना, स्वयं को
भी समाज को भी, अपनी बुद्धि और बल से, इज़्ज़त के साथ।
माँ मेरी मदद करना, मुझे तुम्हारी जरूरत है।

ढल रही हूँ

हर दिन कुछ ढल रही हूँ, कुछ सीख रही हूँ,
कुछ समझ रही हूँ, हाँ, मैं थोड़ा बदल रही हूँ।

उलझनें, सुलझाते-सुलझाते, दर्द को अपने,
छुपाते छुपाते, संभल के ,झिझक के कदम,
बढ़ाते-बढ़ाते, हर दिन कुछ ढल रही हूँ।

माना सब कुछ , कहाँ मिलता है, हर शख्स को,
इस संसार में, पल दो पल के, सुकून की तलाश में,
हर रोज एक, दीया जला रही हूँ।

दीये की बाती बनकर, पल पल मैं भी,
जल रही हूँ, हर दिन कुछ ढल रही हूँ।

दिल्लगी कोई खेल नहीं, यह मजाक भी नहीं,
भरोसा और उम्मीद है यह, कोई व्यापार नहीं,
क्यों भरोसे को मेरे, तोड़ा जाता है हर बार,
छली जा रही हूँ, टूट रही हूँ, हर दिन कुछ ढल रही हूँ।

ज़रूरी

जन्म, जीना,
जिन्दा रहना,
मुश्किल तो है।

मगर परवरिश, पढ़ाई,
आमदनी, जद्दोजहद तो है।

मगर साथी, रिश्ते,
दोस्त, मिलते तो हैं।

मगर हसरतें, शौहरतें,
बुलंदी, काफ़िला है।

मगर खोना,जुदाई,
विदाई, जरूरी है मगर।

माँ

माँ,
मैं तुम्हारा, मखमली स्पर्श पाकर,
खिल जाता हूँ।

कितने यत्न करती हो तुम,
मुझपर वात्सल्य लुटाने के,
घर का काम, मेरा दुग्धपान,
व्यवस्थित हो, हर सामान।

जाने कितने रातजगे, प्रसव पीड़ा,
शरीर की दुर्बलता, भूल जाती हो।

मेरी खिलखिलाहट से, मेरे मुस्कुराने से,
हाँ माँ, मैं तुम्हें, सुखद अनुभूतियाँ, देने के लिए।

अवतीर्ण हुआ हूँ, तुम्हारे, दुःख दर्द, पीड़ा को,
अवशोषित कर, आनन्द और सुख के,
ये आल्हादित क्षण, स्मृतियों में बसकर,
हृदय को, शीतल करने।

परिमंडल

प्रकृति की भाँति ही, ओढ़े रखा है,
स्वयं को, ओज़ोन परत से।

तभी तो कितने दबाव,
गर्मी/ गुस्सा, क्रियाएँ,
प्रतिक्रियाएँ, सहन कर जाती हूँ।

शनै:-शनै: “परिमंडल” का
यह आवरण, छिद्र छिद्र हो जाता है,
असहनीय परिवर्तन आरंभ हो जाते हैं।

दिखती तो हूँ, पर होती हूँ, मृतप्राय सी,
मैं न बचूँगी तो, तुम्हारा भी अस्तित्व ,
कहाँ बचेगा, सोचो तो सही।।

विवेक

तेरे चरणों में ध्यान लगाऊँ,
वो विवेक कहाँ से लाऊँ?
पग पग पर शूल हैं बिखरे हुए,
माया के आकर्षण हैं घेरे हुए।

बुद्धि भी अहंकार से है ग्रसित,
मोह भी छूटता नहीं तनिक।
किस प्रकार ठौर मैं पाऊँ?
वो विवेक कहाँ से लाऊँ?

संसार के कर्म पूरे किए,
कुछ पाप और कुछ पुण्य किए,
पथिक बन हर समय,
बिना विश्राम चलती रही,
कर्म बंधनों से किस तरह,
मैं मुक्त हो जाऊँ?

वो विवेक कहाँ से लाऊँ?
शरीर को इतना सजाया
समय इतना है जो लगाया,
असत्य का पल्लू है पकड़ा हुआ।

जिव्हा को रसपान कराया,
अनावश्यक पारितोषकों से,
कैसे विलग हो जाऊँ?
वो विवेक कहाँ से लाऊँ?

मैं स्वप्न रंजिता

तूने तो, अमृत बरसाया, रात भर,
ऐ पूनम के चाँद, मेरी ही अंजुरी,
छलका गई, कर न पाई रसपान।

महारास की, कल्पना में, डूबी रही मैं,
राह देखती रही, अपलक, कब आएँगे घनश्याम।

रात कब बीती? भोर कब हुआ? रही मैं ,
पूरी की पूरी, अनजान, पर तुम तो, निपुण हो न,
सभी सोलह कलाओं में, तब क्यों नहीं, तोड़ी मेरी
स्वप्न निद्रा, दे जाते कोई, वरदान।

दुनिया तो, रूप रंग बदलती ही है,
पर तुम भी क्या, रूप अपने पर, करते हो ,
अभिमान? छोड़ो अब तो, क्या तुमसे बोलूँ,
चाँदनी लूटते रहे, लूटने वाले, रही मैं मूरख, मैं ही,नादान।

स्वप्नों के जगत में, खो गई थी,
रह गई मैं बनकर, स्वप्न रंजिता।

विजयादशमी

हाँ,
मैंने अपने दिल में ही, रावण को मरते देखा,
जब होती है, कभी किसी से, द्वेष, ईर्ष्या और जलन,
क्रोध की अग्नि, जला देती है, तन और मन।

स्वयं से ही युद्ध करती हूँ, कड़ी वेदना के ज्वर को,
सहती हूँ, अहंकार स्वयं के ही, दिन-रात देखा करती हूँ।

अपने, अपनों को, दूर, और दूर पाती हूँ, पश्चाताप कर,
मानसिक उद्वेग का, नाश करती हूँ, मन के भीतर ही,
पैदा हो जाता है, जब एक राम, तीर कई चलाता है।

हो जाता है संग्राम, चेतना कुछ जागृत होती है,
क्रोध पर, दया की विजय होती है, शनै शनै ही सही।

किन्तु,
अज्ञान पर ज्ञान की, जीत होती है।
दुनिया मनाती है विजयादशमी, वर्ष में एक बार,
मैं तो हर दिन ही, मन के रावण को, जलाया करती हूँ।

बरगद का वह पेड़

श्मशान में खड़ा हुआ,बरगद का वह पेड़,
जानता है, हज़ारों कहानियाँ, “जीने-मरने” की।

सुनी हैं उसने, आवाजें कई, मौन रुदन की,
चीख पुकार की, पीड़ित क्रंदन की, सिसकियों की।

ऐसी कई अनकही बातें, जो बतियाते हैं, रिश्तेदार,
दोस्त और पड़ौसी, जलाने से ख़ाक में मिल जाने तक।

जीवन इतिहास, अच्छाई-बुराई, सुख-दुख, लेन- देन,
पाप-पुण्य, और न जाने क्या- क्या, सब कुछ जानता है वह।

यह भी जानता है कि आज यहाँ कुछ देर ही सही,
देख लेते हैं सभी, अपनी-अपनी मृत्यु को,
भूल जाते हैं फिर, दो कदम दूर जाकर ही।

होकर अपनी आदतों से मजबूर, थोड़ा सा समय जो शेष है,
हो जाते हैं मशगूल, चकाचौंध में, लालच में, ईर्ष्या और द्वेष में,
तेरे-मेरे में, मोह-माया में।

जानता है वह कि, उसकी भी मृत्यु निश्चित है,
न जाने कब कोई आदेश आ जाए, श्मशान को विस्तारित
करने का, कटना पड़ सकता है उसे भी, जड़ सहित।

फिर भी जब तक जीवित है, दे रहा है छाया,
हवा और शान्ति का चबूतरा, निष्पक्ष, निष्कामभाव से।
बरगद का वह पेड़, देखे हैं उसने कई, जीने-मरने के खेल।

आशाओं के दीप

अद्भुत, अनुभूतियों से भरा, हर क्षण,
क्षण-क्षण, मिलकर, दिन, मास और वर्ष।

कुछ बनकर, स्मृतियाँ, शेष हैं,
कुछ बनकर, स्वप्न, अशेष हैं।

विरह, पीड़ा, संहार, मिलन, सुख और निर्माण भी,
विषाद, आपदा, प्रताड़ना, संग हर्ष, उल्लास,
मुस्कान भी, बसंत, शरद, कार्तिक, माघ, कभी बिन
मौसम बरसात भी, दिन-रात, सुबह-शाम, धूप- छाँव।

कुछ फूल खिले, कुछ मुरझाए भी लाख कारण ,
बन पड़े हों, शोक करने, अश्रु बहाने के लिए।

कुछ तो होंगे, राह तकते, तेरे मुस्कुराने के लिए,
हो प्रफुल्लित, आशाओं के दीप जलाकर,
नित नूतन,प्रयोग कर, कर सृजन, हर दिन नवीन,
शक्ति का संचार कर।

लोहड़ी

चलो,
जो हुआ, जैसा हुआ, कहाँ हुआ, कैसे हुआ?
क्यों हुआ, के प्रश्नों को, जला दें आज, अग्नि में।

लोहड़ी के इस पर्व पर, खुश रहें और खुशियाँ बाँटें,
लोहड़ी के इस पर्व पर, तिल-गुड़ की रहे मिठास,
सदा ही सबके जीवन में, इसकी -उसकी, झूठ-सच की।

छोड़ो बाँतें, क्या रखा है, तेरी-मेरी में,
घुटकर, मरकर, इस तरह से जीने में।

नाचो गाओ, रल मिल जाओ, रूसा रासी छोड़कर,
खूब हँसो और सबको हँसाओ, लोहड़ी के इस पर्व पर।

तुम आओ तो

बारह मास में, माघ मास की, उन्मादी ऋतु,
प्रकृति भी है उन्मुक्त, पीली सरसों की चूनर
ओढ़ धरती, गुलाब की सुगन्ध पवन संग बहती।

फसलें हैं लहराती, यौवन की चौखट पर हैं जैसे,
अमराई की तरुणाई, आकर्षित करती है।

भौंरे, खग, मृग चंचलता में मग्न हैं, वायु भी
इतराती है, स्वागत करने का, दायित्व निभाती है जैसे।

गैंदा, हरसिंगार, बनकर आभूषण, सजाते हैं देह धरती की,
मेरा भी मन नृत्य को उत्सुक, प्रसन्न हो मयूर जैसे।

पावस गीत गाती है कोयल, सुन हृदय पुलकित हो उठे,
दे रही है आने का तुम्हारे सन्देश जैसे।

अधीरता देखकर, चिढ़ाती हैं सखियाँ, वियोगी प्रीतम
की राह में, प्रतीक्षारत मुझे जानकर, कुछ उपाय करो
प्रियतम, ऋतुराज तो आ गए, तुम आओ तो, रखूँ मैं भी धीरज।

संपर्क अधरों का मुरली को मिले जैसे, सौन्दर्य चहुँ ओर,
अप्रतिम, अनुपम, मैं राह देखती हूँ, साजन तुम्हारी,
बाट जोहता है, आसमान भी, पूनम के चाँद का जैसे।

सीमा रेखाएँ

वो, शक्ति का स्रोत,
ममता का मानसरोवर,
त्याग और समर्पण की परिभाषा,
भावनाओं का शब्दकोश।

साहस की प्रतिमूर्ति,
आशाओं का मधुर गान, सहनशीलता
की पराकाष्ठा, मर्यादा की छवि,
इच्छाशक्ति की पर्वत शृंखला, पराक्रम की ध्वनि।

सरिता सी शीतल, वायु सी फुर्तीली,
सूर्य सी तेजवान, चाँद सी उज्ज्वल,
धरा सी कठोर, पुष्प सी कोमल।

फिर भी न जाने क्यों,
जकड़े हुए हैं पाँव नारी के।

मिटा दो, वो लकीरें, उन्मुक्त हो
जाने दो उन अदृश्य, अकारण बेड़ियों से।

कुछ सीमा रेखाएँ, तुम स्वयं के लिए भी खींचो।
स्वतंत्र होकर भी, सीमाओं में रहना, जानती है वह।

हमारा चयन

सब, कहते हैं, ईश्वर
सुनते हैं, जो माँगो, देते हैं।
स्वयं भी अनुभव किया।

दिया, अवश्य दिया,
कभी शीघ्र, कभी विलंब से ही सही,
कभी माँगने पर और कभी बिना माँगे ही सही।

पर जब देखती हूँ आसपास, अत्याचार,
अनाचार, अराजकता, असुरक्षा, दरिद्रता,
भूख, लाचारी, बीमारी, क्रोध, ईर्ष्या, घृणा, लालच।

संवेदनहीन, बुद्धिहीन, संस्कारहीन मनुष्यों को,
विचार आता है कि, हम मनुष्यों ने, ईश्वर से क्या यही माँगा था?

क्या हमारा चयन इतना दोषपूर्ण था?
क्या विवेक शक्ति शून्य ही हो गई थी?
क्या हमने स्वयं ही इस दलदल का निर्माण किया?

परिवर्तन की आशा लिए, क्यों न
आरम्भ किया जाए, चुनाव प्रक्रिया
पर सचेत होकर आँकलन, अवश्य ही ईश्वर
प्रदान करेंगे, शान्ति, प्रेम, सम्पन्नता, स्वास्थ्य और आयु।

पर प्रयास तो करने ही होंगे,
परिणाम भी दिखेंगे, आओ थोड़ा सा साथ दो न।

होली इस बार

नेह की वृष्टि, टेसू, गुलाब,
पलाश के, रंगों में घुल मिलकर,
पड़ गई जब, सजनी पर।

चली रंग बिरंगी पिचकारी,
भिगो कर दामन और चोली,
कामायनी की सुन्दर, देह पर।

पवन मुस्करा रहा, अबीर गुलाल
से सिन्दूरी होकर, पुलकित हो गया,
गौरी के तन को छूकर।

मेघ मल्हार गा रहे, उमड़
घुमड़ कर, रागिनी सी चल
रही मंदाकिनी तन भी पुलकित,
मन भी पुलकित, खेल साजन संग सजनी,
इस बार होली में, प्रेम रस में, डूबकर।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - पिंकी परुथी 'अनामिका'

जन्म - 22.10.1970

माता-पिता - श्रीमती निशा तनेजा - श्री हरीशचंद्र जी तनेजा

पति - डॉ. पंकज परुथी

शिक्षा - बी.ई. (इलेक्ट्रिकल 1991)

कार्यक्षेत्र - गृहिणी, समाज सेविका (महिला साक्षरता एवं बाल कल्याण एवं जरुरतमंद मरीजों के लिए कार्यरत्), लेखिका (सभी विधाओं में)

पता - pp.pinky97@gmail.com

ईमेल - डॉ. पंकज परुथी, कोटा रोड, बारां राजस्थान - 325205

मो.नं. - 9414257474

प्रकाशन
1. जे.एम.डी. प्रकाशन - नारी काव्य सागर (काव्य संग्रह), हिन्दी सागर (काव्य संग्रह)
2. अर्णव कलश एसोसिएशन - सुगंध परिवेश की (काव्य संग्रह)
3. के.बी.एस. प्रकाशन - अपूर्वा (गीत-नवगीत संग्रह), विचार मंथन (आलेख संग्रह) एवं स्पंदन (काव्य संग्रह)
4. नूतन साहित्य कुंज - कुंज निनाद (काव्य संग्रह), मनोभाव (काव्य संकलन), अखिल भारतीय साहित्य परिषद, राजस्थान (बारां), वूमेंस आवास (काव्य संकलन), अंतरा शब्द शक्ति प्रकाशन, सृजक सृजन समीक्षा(एकल पुस्तक), आधी आबादी का सम्पूर्ण राग (साझा काव्य संग्रह), अपनी शान है तिरंगा (साझा काव्य संग्रह), मै आल्हादिनी (एकल काव्य संग्रह), मै अपराजिला (छन्द मुक्त काव्य संग्रह) पत्रिका ब्यूरो (बारां), लोकजंग (भोपाल), वर्तमान अंकुर (नोएडा),डालटा एक्सप्रेस (गाज़ियाबाद) एवं अन्य 80 से अधिक रचनाएं प्रकाशित (डेढ़ वर्ष में)।

सम्मान
1. विश्व हिन्दी रचनाकार मंच द्वारा - श्रेष्ठ कवयित्री सम्मान 2017।
2. अर्णव कलश एसोसिएशन द्वारा - पं.माधव प्रसाद मिश्र कलम सौगंध सम्मान।
3. मातृभाषा उन्नयन संस्थान एवं अंतरा शब्द शक्ति द्वारा अंतरा शब्द शक्ति सम्मान ।
4. मातृभाषा उन्नयन संस्थान द्वारा - भाषा सारथी सम्मान ।
5. काव्यांचल द्वारा - काव्य मेघ सम्मान एवं काव्य शिखर सम्मान।
6. वूमेन्स एचीवर अवार्ड 2018- एंटी करप्शन फाउंडेशन ऑफ इंडिया के द्वारा ।
7. वूमन आवाज सम्मान- 2018, अंतरा शब्द शक्ति प्रकाशन द्वारा।
8. हिन्दी साहित्यश्री सम्मान - अवर्ण कलश एसोसिएशन द्वारा
9. डॉ. महाराज कृष्ण जैन स्मृति सम्मान 2018 - पूर्वोत्तर हिन्दी अकादमी द्वारा।
10. नारी सागर सम्मान 2018 - जे.एम.डी. पब्लिकेशन द्वारा ।
11. हिन्दी प्रचारिणी सभा बांरा द्वारा हिन्दी भाषा के विकास और उत्थान के लिए सम्मान।
12. साहित्य भूषण सम्मान 2018 - काव्य रंगोली परिवार द्वारा।
13. अंतरा शब्द शक्ति सम्मान 2019 ।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-93-86666-78-9

मूल्य 60/-